कबीर साहिब की

ज्ञान-गुदड़ी रेख़ते और झूलने

जिसके आदि में कबीर साहिब के इष्ट के
विषय में संक्षेप में तर्क किया है और
फुट-नोटों में गूढ़ शब्दों के
अर्थ दिये हैं।

मुद्रक व प्रकाशक
बेलवीडियर प्रिंटिंग वर्क्स,
इलाहाबाद।

नवीं बार] १९७८ [मूल्य १ रु० ५० पै०

Printed at The Belvedere Printing Works, Allahabad, By Sheel Moh

कबीर साहिब का इष्ट

—:०:—

कबीर साहिब की शब्दावली के पहिले भाग के आदि में उन महात्मा का जीवन-चरित्र दिया है जिसमें लिखा है कि कबीर साहिब का इष्ट "सत्त पुरुष" (निर्मल चेतन्य देश का धनी) था जो ब्रह्म और पारब्रह्म दोनों के परे है और उसी इष्ट और उसके धुन्यात्मक नाम की महिमा उन्होंने अपनी बानी में दृढ़ाई है, पर कितने ही पद पुराने प्रमानिक हस्त-लिखित ग्रन्थों में ऐसे भी हैं जिसमें राम नाम की महिमा गाई है [उसका अभिप्राय औतार स्वरूप श्रीरामचन्द्र जी से नहीं है बरन् ब्रह्मांड की चोटी (शून्य) के धुन्यात्मक शब्द "राँ" से, जैसा कि उन पदों को पूरा-पूरा पढ़ने और अर्थ पर विचार करने से साफ खुल जाता है।]

इसका स्पष्ट कारन यह है कि जब तक जक्त-प्रचलित नाम या इष्ट की महिमा न की जातीं सर्वसाधारन लोग कबीर साहिब की बानी से दूर भागते और नये इष्ट के नाम से चौंकते, इसलिये उनके उपदेश का उतने लोगों को कदापि लाभ न पहुँचता जितना कि इस जुगत से हुआ। इसी अभिप्राय से कबीर साहिब ने स्वामी रामानन्द जी को मर्य्यादा और लोक-दिखावा के लिये अपना गुरू धारन किया।

कितने ही असली पद कबीर साहिब के ऐसे भी हैं जिनमें उन्होंने सिवाय "सत्त नाम" के कुल औतार सरूपों के नाम का खुले तौर पर खंडन किया है और केवल "सत्त नाम" ही को अबिनाशी बतलाया है (क्योंकि प्रलय और महाप्रलय में कुल ब्रह्मांड और पारब्रह्मांड के धनियों के नाम का अभाव हो जाता है) पर कबीर साहिब के गुप्त होने के पीछे बहुत से राम नाम के टेकियों ने उनके ऐसे पदों में भी जहाँ कबीर साहिब ने "सत्त नाम" की महिमा जताई है राम नाम बना दिया। यदि पक्षपात और टेक छोड़ कर विचार से कबीर साहिब के पदों को पढ़ा जाय तो निश्चय हो जायगा कि कबीर साहिब ने अपनी बानी में विशेष कर "सत्त नाम" ही को दृढ़ाया है, पर जहाँ राम नाम की महिमा की है वह शब्द भी केवल उस नाम के होने से छेपक नहीं कहे जा सकते। इसी के साथ राम नाम के टेकियों की यह बहस भी कि "सत्त नाम" से कबीर साहिब का अभिप्राय राम नाम ही से है ठीक नहीं है जैसा कि भेद बानी के कई शब्दों से स्पष्ट होता है जिनमें पिंड ब्रह्मांड और निर्मल चेतन्य देश के लोकों के धनियों और हर एक स्थान के धुन्यात्मक शब्द को खोल कर अलग-अलग बताया है—दृष्टांत के लिए शब्द २२ व २३ पृष्ठ ७६ से ८४ तक कबीर शब्दावली भाग १ के देखिये।

इस पुस्तक के दूसरे छापे (एडिशन) में रेख्ते और झूलने जो कबीर शब्दावली के पहिले और दूसरे भागों में छपे थे वहाँ से निकाल कर कुछ नये रेख्तों और झूलनों के साथ शामिल किये गये हैं जिससे प्रमान इसका बढ़ गया है।

इलाहाबाद,
अक्टूबर, सन् १९१४ }

अधम,
एडिटर, संतबानी पुस्तक-माला।

धर्मदास बिनवै कर जोरी । सतगुरु सुनिये बिनती मोरी ॥१॥
ज्ञान गूदड़ो करो प्रकासा । जा से मिटै जीव जग-फाँसा ॥२॥
अलख पुरुष इककीन्ह पसारा । लख चौरासी धागा डारा ॥३॥
पाँच तत्त से गुदड़ी बीनो । तीन गुनन से ठाढ़ी कीनी ॥४॥
ता में जीव ब्रह्म अरु माया । समरथ ऐसा खेल बनाया ॥५॥
सब्द की सुई सुरत के डोरा । ज्ञान के डोभन सिरजन जोरा ॥६॥
सोवन पाँच पचीसो लागी । काम क्रोध मोह मद पागी ॥७॥
काया गुदड़ी कै बिस्तारा । देखो संतो अगम सिंगारा ॥८॥
चाँद सुरज दोउ पैवँद लागे । गुरु प्रताप सोवत उठि जागे ॥९॥
अब गुदड़ी की करु हुसियारी । दाग न लागे देखु बिचारी ॥१०॥
जिन गुदड़ी को कियो बिचारा । तिन हीं भेटे सिरजनहारा ॥११॥
सुमति के साबुन सिरजन धोई । कुमति मैल सब डारो खोई ॥१२॥
धीरज धूनी ध्यान को आसन । सत कोपीन सहज सिंहासन ॥१३॥
जोग कमंडल कर गहि लीन्हा । जुगति फावरी[१] मुरसिद दीन्हा ॥१४॥
सेली सील बिबेक कि माला । दया कि टोपी तन धर्मसाला ॥१५॥
मेहर मतंगा मत बैसाखी । मृगछाला मनहीं की राखी ॥१६॥
निःचय धोती स्वास जनेऊ । अजपा जपै सो जानै भेऊ ॥१७॥
लकुटी लौ की हिरदा झोरी । छिमा खड़ाऊँ पहिरि बहोरी ॥१८॥
भगति मेखला सुरत सुमिरनी । प्रेम पियाला पीवे मौनी ॥१९॥
उदास कूबरी कलह निवारी । ममता कुतिया को ललकारी ॥२०॥
जगत जँजीर बाँधि जब दीन्ही । अगम अगोचर खिड़की चीन्ही ॥२१॥
तत्त तिलक दीन्हे निरबाना । राग त्याग बैराग निधाना ॥२२॥
गुरुगम चकमक मनसा तूला[२] । ब्रह्म अगिनि परगट करि मूला ॥२३॥
संसय सोग सकल भ्रम जारी । पाँच पचीसो परगट मारी ॥२४॥
दिल दरपन करि दुबिधा खोई । सो बैरागी पक्का होई ॥२५॥
सुन्न महल में फेरा देई । अमृत रस की भिच्छा लेई ॥२६॥

(१) फरुही जिससे साधू लोग अपने बैठने की जगह साफ़ कर लेते हैं। (२) रुई।

दुख सुख मैल जगत के भावा। तिरबेनी के घाट छुड़ावा।२७।
तन मन सोधि भयो जब ज्ञाना। तब लख पायो पद निर्बाना।२८।
अष्ट कँवल दल चक्कर सूझै। जोगी आप आप में बूझै।२९।
इँगला पिंगला के घर जाई। सुखमन सेज जाय ठहराई।३०।
ओअं सोहं तत्त बिचारा। बंकनाल का किया सम्हारा।३१।
मन को मारि गगन चढ़ि जाई। मानसरोवर पैठि अन्हाई।३२।
छूटे कलमल मिले अलेखा। इन नैनन साहिब को देखा।३३।
अहंकार अभिमान बिडारा। घट का चौका करि उँजियारा।३४।
अनहद नाद नाम को पूजा। सत्त पुरुष बिन देव न दूजा।३५।
हित कर चंदन तुलसी फूला। चित कर चाउर संपुट मूला।३६।
सरधा चँवर प्रीति कर धूपा। नूतन[1] नाम साहिब कर रूपा।३७।
गुदड़ी पहिरे आप अलेखा। जिन यह प्रगट चलायो भेषा।३८।
सत्त कबीर बकस जब दीन्हा। सुर नर मुनि सब गुदड़ी लीन्हा।३९।
रहै निरंतर सतगुरु दाया। सतसंगति में सब कछु पाया।४०।
ज्ञान गूदड़ी पढ़ै प्रभाता। जनम जनम के पातक जाता।४१।
जो जन जाय जपै ये ध्याना। सो लखि पावै पद निर्बाना।४२।
संझा सुमिरन जो जन करहीं। जरा मरन भौसागर तरहीं।४३।
कहै कबीर सुनो धर्मदासा। ज्ञान गूदड़ी करो प्रकासा।४४।

॥ इति ॥

रेखते

(१)

गुरुदेव बिन जीव की कल्पना ना मिटै, गुरुदेव बिन जीव का भला नाहीं।
गुरुदेव बिन जीव का तिमर नासै नहीं, समझि बिचारि ले मनै माहीं॥
राह बारीक गुरुदेव तें पाइये, जनम अनेक की अटक खोलै।
कहै कबीर गुरुदेव पूरन मिले, जीव और सीव तब एक तोलै॥

(१) नवीन, अचरजी।

(२)

करो सतसंग गुरुदेव के चरन गहि, जासु के दरस तें भर्म भागै ।
सील औ साच संतोष आवे दया, काल की चोट फिरि नाहि लागे ॥
काल के जाल में सकल जिव बंधिया, बिन ज्ञान गुरुदेव घट अँधियारा ।
कहै कबीर जन जनम आवै नहीं, पारस परस पद होय न्यारा ॥

(३)

गुरुदेव के भेद को जीव जानै नहीं, जीव तो आपनी बुद्धि ठानै ।
गुरुदेव तो जीव को काढ़ि भवसिंध तें, फेरि लै सुक्ख के सिन्ध आनै ॥
बंद करि दृष्टि को फेरि अंदर करै, घट का पाट गुरुदेव खोलै ।
कहत कबीर तू देख संसार में, गुरुदेव समान कोइ नाहि तोलै ॥

(४)

रैन दिन संत यों सोवता देखता, संसार की ओर से पीठि दीये ।
मन औ पवन फिर फूटि चालैं नहीं, चंद औ सूर को सम्म कीये ॥
टकटकी चंद चकोर ज्यों रहतु है, सुरत औ निरत का तार बाजै ।
नौबत घुरत है रैन दिन सुन्न में, कहै कबीर पिउ गगन गाजै ॥

(५)

पाव और पलक की आरतो कौन सी, रैन दिन आरती संत गावै ।
घुरत निस्सान तहँ गैब की झालरा, गैब के घट का नाद आवै ॥
तहँ नीव बिन देहरा[1] देव निर्बान है, गगन के तख्त पर जुगत सारो ।
कहै कबीर तहँ रैन दिन आरती, पासिया पाँच पूजा उतारो ॥

(६)

साईं आप की सेव तो आप ही जानिहो, आप का भेव कहो कौन पावै ।
आपनी आपनी बुद्धि अनुमान से, बचन बिलास करि लहरि लावै ॥
तू कहै तैसा नहीं, है सो दीखै नहीं, निगम हूँ कहत नहिं पार जावै ।
कहै कबीर या सैन गूँगा तई, होइ गूँगा सोई सैन पावै ॥

(७)

कर्म और भर्म संसार सब करत है, पीव की परख कोइ संत जानै ।
सुरत और निरत मन पवन को पकर करि, गंग और जमुन के घाट आनै ॥

(१) मंदिर ।

पाँच को नाथ करि साथ सोहँ[1] लिया, अधर दरियाव का सुक्खमानै ।
कहै कबीर सोइ संत निर्भय घरा, जनम और मरन का भर्म मानै ॥

(८)

दूर वे दूर वे दूर वे दूरमति, दूर की बात तोहिं बहुत भावै ।
है हजूर हाजिर साहिब धनो, दूसरा कौन कहु काहि गावै ॥
छोड़ि दे कल्पना दूरि का धावना, राज तजि खाक मुख काहि लावै ।
पेड़ के गहे तें डारि पल्लौ मिलै, डारि के गहे नहिं पेड़ पावै ॥
डारि औ पेड़ औ फूल फल प्रगट है, मिलै जब गुरू इतनो लखावै ।
संपति सुख साहिबी छोड़ि जोगी भये, सून्य की आस बनखंड जावै ॥
कहै कबीर बनखंड में क्या मिलै, दिल को खोजु दीदार पावै ॥

(९)

राम ही राम सब जगत ही कहत है,
कहो जी राम का रूप कैसा ।
कौन सी कोठरी कौन दर्बार है,
कौन से महल में राम बैसा[2] ॥
कौन सी सुन्दरी रमै सुख सेजि में,
दिवस औ रैन मिलि स्याम संगा ।
मिलि गई पीव से और दरसै नहीं,
नारि औ पुरुष मिलि एक अंगा ॥
कहो जी राम का कौन सा रंग है,
हरित की सेत रत[3] पीत काला ।
कहो जी राम का कौन अस्थूल[4] है,
ज्वान देखा किधौं बृद्ध बाला ॥
बेद से रहित है भेद कैसे प्रगट,
बिना मुख जीभ आवाज होई ।
रमै घट घट में आपु न्यारा रहै,
पूर्न आनंद है राम सोई ॥

(१) सन्मुख, संग । (२) बैठा । (३) लाल । (४) शरीर ।

पाँच पच्चीस गुन तीन तें रहित है,
कौन सी दृष्टि से राम देखा।
सोई हैं संत जिन्ह भेद पाया सही,
कहै कबीर जिन्ह राम पेखा॥

(१०)

राम का नाम संसार में सार है,
राम का नाम अमृत्त बानी।
राम के नाम तें कोटि पातक हरैं,
राम का नाम बिस्वास मानी॥
राम का नाम लै साधु सुमिरन करै,
राम का नाम लै भक्ति ठानी॥
राम का नाम लै सूर सन्मुख लरै,
पैठि संग्राम में जुद्धि ठानी॥
राम का नाम लै नारि सत्ती भई,
जरी मरि कंत सँग खेह उड़ानी।
राम का नाम लै तीर्थ सब भरमिया,
करत अस्नान झक्कोरि पानी॥
राम का नाम लै मूर्ति पूजा करै,
राम का नाम लै देत दानी।
राम का नाम लै बिप्र भिच्छुक बनै,
राम का नाम ल दुर्लभ्भ जानी॥
राम का नाम चारि बेद का मूल है,
निगम निचोर करि तत्व छानी।
राम का नाम षट सासतर मत्थिये,
षट दरसन में चली कहानी॥
राम का नाम अगाध लीला बड़ी,
खोजते खोज नहिं हारि मानी।

राम का नाम लै बिस्नु सुमिरन करै,
राम का नाम सिव जोग ध्यानी ॥
राम का नाम लै सिद्ध साधक बनै,
सिव सनकादि नारद गियानी ।
राम का नाम लै रामचँद दृष्टि लइ,
गुरु बसिष्ठ भये मंत्र दानी ॥
कहाँ लौं कहौं अगाध लीला रची,
राम का नाम काहू न जानी ।
राम का नाम लै कृस्न गीता कथी,
बाँधिया सेत तब मर्म जानी ॥
है कैसो निरगुन निराकार परम जोति,
तासु को नाम निरंकार मानी ।
रूप बिन रेख बिन निगम अस्तुति करै,
सत्त की राह अकथ कहानी ॥
बिस्नु सुमिरन करै सिव जोग जा को धरै,
भनै सब ब्रह्म बेदान्त गाया ।
सनकादि ब्रह्मादि कोई पार पावै नहीं,
तासु का नाम कह रामराया ॥
कहै कबीर वह सक्स[1] तहकीक करु,
राम का नाम जो पृथी लाया ।

(११)

संत की चाल संसार तें भिन्न है, सकल संसार में चुहर-बाजी[2] ।
हिन्दू मुसलमान दोइ दीन सरहद बने, बेद कितेब परपंच साजी ॥
हिन्दू के नेम आचार पूजा घनो, ब्रत एकादसी रहत राजी ।
बकरो मारि कै मास भच्छन करै, भगत न होय यह दगाबाजी ॥
जीव का हतन अपराध का मूल है, कठिन यह चूक चित चेतु हाजी ।
सकल धर्म ऊपर कृस्न गीता कथी, कृस्न का कहा तू मान पाजी ॥

---

(१) आदमी । (२) दिल्लगी, झूठा खेल ।

कृस्न गीता पढ़ै दृष्टि उघरी नहीं, येहि बक मुआ तूँ मूढ़ पाजी।
जीव दया मम दया कृस्न कहि, भैंस के आगे ज्यों बेनु बाजी॥
मुसलमान कलमा पढ़ै तीस रोजा रहे, बंग निमाज धुनि करत गाढ़ी।
बकरी मुरगी मारि जिबह करै, गाय पछाड़ि कै कोह काढ़ी॥
हठा न मानों मियाँ पाओ अपना किया, भिस्त न्यारी रही नर्क डारी।
होइगा हिसाब तो ज्वाब क्या देवगे, ले जाइँगे फिरिस्ते पकरि दाढ़ी॥
कठिन कुन्दी करैं कष्ट भारी पड़ै, होइ तबही चीन्हि पड़ै गाढ़ी।
दुख दुन्द भारी अबहु चेता नहीं, फेर पछितावगे रार बाढ़ी॥
मोम दिल मेहरबाँ दया दिल में धरो, भिस्त हर रोज सो रहै ठाढ़ी।
कहै कबीर सुख साहिबी सो करै, साच को चीन्ह करि झूठ छाड़ी॥

(१२)

दीद बरदीद परतीत आवे नहीं,
दूरि की आस बिस्वास भारी।
कथा औ कबित इस्लोक रसरी बटै,
बकै बहु बाय मुख मूढ़ अनारी॥
हृदै सूझै नहीं संधि बूझै नहीं,
निकटहीं बस्तु लै दूरि डारी।
तत्त को छाड़ि निःतत्त को सब कथै,
भर्म में पड़े सब भेषधारी॥
जटाधारी घने जती जोगी बने,
मुद्दरा पहिरि कै कान फारी।
नग्न नागा रहे सर्ब लज्जा तजे,
बज्र कछोटि[1] कसि काम जारी।
(एकै) छेदि अजूज[2] तन घुंघरू बाँधि कै,
स्वाँग केते कहूँ गर्ब धारी।
(एकै) आकास मौनी मुखी उर्धबाहू नखी,
भये थानेस्वरी दंभकारी॥

(१) अष्ट धात का काछा। (२) इन्द्री।

(एकै) बाँधि पग खंभ में अधोमुख झूलिया,
धूम घूँटै तन कष्ट कारी[1]।
(एकै) बैठे गोसा[2] मारि पंच अगिन तन तपै,
(एकै) बैठे जल सैन आसन मारी ॥
(एकै) अन्न छाड़े फिरै दूबर अंगन रहै,
(एकै) दूध भोजन करै दूधधारी।
(एकै) लोन छाड़ि के भये हैं अलोनियाँ,
गड़ि रहे गुफा में लाय तारी ॥
(एकै) तिलक माला धरे मूरति पूजा करै,
संख धुनि आरती जोति बारी।
सेवा कीन्हा सही देव चीन्हा नहीं,
आत्मा-राम तजि जड़ पूजकारी ॥
पूजि पाषान अभिमान अंधा हुआ,
चित्त चेतन्य तैं बीच पारी।
जोग पंडित बड़े सास्त्र गीता पढ़ै,
भर्म की भीत नहिं टरत टारी ॥
कहाँ लै कहौं बहुरूप का पेखना,
आपु आपनो सभनि बिसारी।
इतनी बिडम्बना तें बस्तु न्यारे रही,
ज्ञान की दृष्टि लीजै बिचारी ॥
कहै कबीर कोइ संत जन जौहरी,
काटि जम फंद उठि चेत सँभारी ॥

(१३)

दीदबरदीद परगट परतच्छ है, दृष्टि डारी बेदृष्टि ज्ञानी।
सृष्टि यहाँ आपु है आपु यहाँ सृष्टि है, आपुही अगिन छिति[3] पवन पानी॥
आपुही बीज है आपुही अंकुर है, रज औ सत्त तम गुन बखानी।
पिंड महँ प्रान है प्रान महँ पिंड है, पिंड औ प्रान को भिन्न मानी ॥

(१) धुएँ को पीते हैं और तन को कष्ट देते हैं। (२) एकांत। (३) पृथ्वी।

पिंड का सिरजता बोलता ब्रह्म है, नजर पसारि तूँ देखु ज्ञानी।
जासु कारन तुम देस पृथ्वी तजी, तत्व को छाड़ि भये जोग ध्यानी॥
सोइ दूरि काहे धरी दरस ले हर घरी, दूर का आसरा सुपन कहानी।
बोलता जीव सरबज्ञ साहिब बना, कर्ता सरूप की यह निसानी॥
एक तें अनँत है अनँत तें एक है, सुघर जन दृष्टि करि साच मानी।
सकल बिस्तार परकास जा तें भया, सोई घट माहिं निज तत्त छानी॥
दया की दृष्टि महँ दरस औ परस है, दया बिनु दुंद दुनिया दिवानी।
दूनिया दुरमती सुमति तें बीछुड़ी, धंध धोखा किया कुमति ठानी॥
आपु को ना लखै आपु भटकत फिरै, आपु हीं बावरी आपु स्यानी।
गाफिलो आपनो आपु समुझै नहीं, छुच्छ के फटके फोफ उड़ानी॥
कहै कबीर बौवाथ[1] में सब गये, कहा हम बहुत काहू न मानी॥

(14)

चाम के महल में बोलता राम है,
चाम औ राम को चीन्हु भाई।
धन्न उस्ताद जिन्ह चाम मूरति गढ़ी,
सकल सिंगार छबि रूप छाई॥
एक ही बुंद तें साज साबित किया,
बिबिधि परकार करि जन्त्र लाई।
पाँव औ पिंडुरी जंघ कटि[2] केहुनी,
नाभि कुण्डलि रची सरस भाई॥
पवन की गाँठि दे महल ठाढ़ा किया,
हृदय बिचित्र भुजडंड लाई।
हाथ औ अंगुरी सकल पूरी बनी,
अंगुरी अग्र में नखन लाई॥
कंठ मस्तक मनो मुकुट लीलाट है,
रत्न धन नैन दुइ दृष्टि पाई।

(1) सुपने में बर्राना। (2) कमर।

स्रवन मुख नासिका दसन[1] सीखर[2] बने,
बदन उजियार सोभा निकाई ॥
पीठि पाछे बनी मेरु डँड लागिया,
पाँसुरी बीच पिंजर गढ़ाई ॥
चाम बीच माँस है माँस बिच हाड़ है,
हाड़ के बिच नस रोम लाई ॥
गूद बिच बिंद है बिंद बिच पवन है,
पवन बिच प्रान बोलत जु होई ।
कहै कबीर यह ख्याल करता किया,
ज्ञान की दृष्टि त चीन्हु सोई ॥

(१५)

भेष दरियाव में हंस भी होत हैं,
भेष दरियाव में बग्ग[3] होई ।
भेष दरियाव में रत्न भी होत है,
भेष दरियाव में संख होई ॥
जिवत मरे बिना भेद पावै नहीं,
जिवत हीं मरै तब भेद पावै ।
कहै कबीर गुरुदेव के ज्ञान से,
तब कछू नीमन[4] दृष्टि आवै ॥

(१६)

साच औ झूठ की तान कसे मिलै,
रैन औ दिवस का फेर भाई ।
लोन औ सरकरा[5] एक सी होत है,
कालपी[6] जात का लोन पाई ॥
हंस औ बग्ग तो एक से होत हैं,
भच्छ में होत कछु फेर भाई ।

(१) दाँत । (२) सिर । (३) बकुला । (४) पक्की, पूरी । (५) चीनी । (६) कालपी नगर की मिसरी मशहूर है ।

कहै कबीर सो हंस मुक्ता चुनै,
बग्ग तो माछरी ढूंढ़ि खाई ॥

(१७)

भेष को देखि के कोई भूलो मती, भेष पहिरे कोई सिद्ध नाहीं ।
काम औ क्रोध मद लोभ माहीं घने, सील औ साच संतोष नाहीं ॥
कपट के भेष तें काज सोभै नहीं, कपट के भेष नहिं राम राजी ।
कहै कबीर इक साच करनी बिना, काल की चोट फिर खाइगा जी ॥

(१८)

कहत बैराग औ राग छूटै नहीं, पाँच को राचि करि साच खोया ॥
इन्द्री स्वारथ को सबद अनुभव कथै, पंथ को बाद करि जीव छोया ॥
नाम निरगुन कहै रहै सरगुन महीं, सिष्य साखा की भूख घेरी ।
कहै कबीर जब काल गढ़ घेरिहै, कौन है जीव की गत्ति तेरी ॥

(१९)

बिना बैराग कहु ज्ञान केहि काम का,
पुरुष बिनु नारि नहिं सोभ पावै ।
स्वाँग तो साहु का काम है चोर का,
कपट की झपट में बहुत धावै ॥
बात बहुते कहै झूठ छूटै नहीं,
मुख के कहे कहा खाँड़ खावै ।
कहै कबीर जब काल गढ़ घेरिहै,
बात बहु बकै सब भूलि जावै ॥

(२०)

नाच आवै तबै काछ को काछिये, नाच बिन काछ केहि काम आवै ।
पहिरि सलाह[1] धरि नाँव रनजीत का, बे घमासान किये भागि जावै ॥
उतरि रन सन्मुख का डरै रन महीं, दाद दरगाह में नाहिं पावै ।
चाल है भेंड़ की खाल है सिंघ की, कहै कबीर तेहि स्यार खावै ॥

(१) शस्त्र, हथियार ।

(२१)

बेद बेहान्त औ कहत है भागवत । अर्थ अनुभव का करत नीका ।
आत्मको भूलि के ढूँढ़ते सास्त्र को । रहा सरजाम बिनु सर्ब फोका ।
काम औ क्रोध उर माहिं काँटा घना । नाम निर्बान का नाहिं टीका ।
कहै कबीर कारज कैसे सरै । कनक औ कामिनी हाथ बोका ।

(२२)

अलख के पलक में खलक सब जायगा,
परख दीदार दिल थार तेरा ।
सुरत में निरत करि भाव गाथा करो,
यही बंदे बंदगी फलै तेरा ॥
चोट का पै करो उलटि आपै डरो,
जहाँ देखो तहाँ प्रान मेरा ।
अकिल से खोजि ले गाफिली छोड़ि दे,
चेति ले समुझि ले यही बेरा[1] ॥
सुन्न का बुदबुदा सुन्न उतपत भया,
सुन्नहीं माहि फिर गुप्त होई ।
जाप अजपा जपो अलख आपै लखो,
बाहरे भीतरे एक होई ॥
बैराट के खेल में सकल हो रमि रहा,
भर्म की भीति मति नाँव कोई ।
अडोल अबोल गुरु सबद लागा रहै,
कहै कबीर फकीर सोई ॥

(२३)

ब्रह्म है बृच्छ ता फूल माया भई,
फूल तें तीन फल लिये उपाई ।
लख चौरासी जोनि बाजी रची,
ब्रह्म ही बीज ता में समाई ॥

---

(१) समय ।

पाँच जो तत्व ता बीच वे खँभ भये,
काया यह दुर्मति देवल बनाई ।
पाँच लग लाय परकिर्ति पच्चीस लै,
झोपड़ी बदन सो सुघर छाई ॥
ब्रह्म तें जीव भो जगत में बहि रहा,
बिखरिया खाँड़ ज्यों रेत समाई ।
बीनते ना बनै छानते ना छनै,
पकड़िये एक सो मूल जाई ॥
एक जिव जानि कुल कानि तजु रे मना,
समुझु रे मन बहुत कष्ट पाई ।
जुगन जुग भर्मिया कर्म बहु कर्मिया,
आस की फाँस में क्या सताई ॥
सरन सतगुरु लिया सुमति ऐसे भई,
घोरि के खाँड़ जल में जमाई ।
ब्रह्म ही अग्नि पर औटि के ताइया,
कहै कबीर बहु कंद पाई ॥

(२४)

गंग उलटी धरो जमुन बासा करो[1],
पलटि पँच तीरथ पाप जावै ॥
नीर निर्मल तहाँ रैन दिन झरतु है,
न्हाय जो बहुरि भवसिंध न आवै ।
फिरत बौरे तहाँ बुद्धि को नास है,
बाज के झपट में सिंघ नाहीं ।
कहै कबीर उस जुक्ति को गहैगा,
जनम औ मरन तब अंत पाई ॥

---

(१) गंग अर्थात् दहिनी स्वासा को चढ़ाओ और जमुन अर्थात् बाँई स्वासा के साथ मिलाओ ।

(२५)

देख वोजूद में अजब बिसराम है,
होय मौजूद तो सही पावै।
फेरि मन पवन का घेरि उलटा चढ़ै,
पाँच पच्चीस को उलटि लावै॥
सुरत की डोर सुख सिंध का झूलना,
घोर की सोर तहँ नाद गावै।
नीर बिन कँवल तहँ देख अति फूलिया,
कहै कबीर मन भँवर छावै॥

(२६)

चक्र के बीच में कँवल अति फूलिया, तासु की सुक्ख कोइ संत जानै।
कुलुफ[1] नौद्वार औ पवन को रोकना, तिरकुटी मद्ध मन भँवर आनै॥
सबद की घोर चहुँ ओर ही होत है, अधर दरियाव को सुक्ख मानै।
कहै कबीर यों झूल सुख सिंध में, जन्म औ मरन का भर्म भानै[2]॥

(२७)

गंग औ जमुन के घाट को खोजि ले, भँवर गुञ्जार तहँ कर भाई।
सरसुतो नीर तहँ देखु निर्मल बहै, तासु के नीर पिये प्यास जाई॥
पाँच की प्यास तहँ देखि पूरी भई, तीन की ताप तहँ लगे नाहीं।
कहै कबीर यह अगम का खेल है, गैब का चाँदना देख माहीं॥

(२८)

माड़ि मत्थान मन रई[3] को फेरना,
होत घमसान तहँ गगन गाजै।
उठत झनकार तहँ नाद अनहद घुरै,
तिरकुटी महल के बैठु छाजै[4]॥
नाम की नेत[5] करि चित्त को फेरिया,
तत्त को ताय करि घिर्त लीया।

(१) ताला। (२) तोड़ै। (३) मथनी। (४) छज्जे पर। (५) रस्सी।

कहै कबीर यों संत निर्भय हुआ,
परम सुख धाम तहँ लागि जीया ॥

(२९)

गड़ा निस्सान तहँ सुन्न के बीच में, उलटि के सुरत फिर नाहिं आवै।
दूध को मत्थ करि घितं न्यारा किया, बहुरि फिर तत्त में ना समावै ॥
माड़ि मत्थान तहँ पाँच उलटा किया, नाम नौनीति[1] लै सुरत फेरी।
कहै कबीर यों संत निर्भय हुआ, जन्म औ मरन की मिटी फेरी ॥

(३०)

ससि परकास तें सूर ऊगा सही, तूर बाजै तहाँ संत झूलै।
तत्त झनकार तहँ नूर बरसत रहै, रस्स पीवै तहाँ पाँच भूलै ॥
दरियाव औ बुन्द ज्यों देखु अन्तर नहीं, जीव औ सीव यों एक आहीं।
कहै कबीर या सैन गूँगा तई, बेद कत्तेब को गम्म नाहीं ॥

(३१)

अगम अस्थान गुरु-ज्ञान बिन ना लहै, लहै गुरु-ज्ञान कोइ संत पूरा।
द्वादस पलटि के खोड़स परगटै, गगन गरजै तहाँ बजै तूरा ॥
इंगला पिंगला सुषमना सम करै, अर्ध औ उर्ध बिच ध्यान लावै।
कहै कबीर सोइ संत निर्भय रहै, काल को चोट फिर नाहिं खावै ॥

(३२)

अधर आसन किया अगम प्याला पिया,
जोग की मूल गहि जुगति पाई।
पंथ बिन जाइ चलि सहर बेगमपुरे,
दया गुरुदेव की सहजि आई ॥
ध्यान धरि देखिया नैन बिन पेखिया,
अगम अगाध सब कहत गाई।
कहै कबीर कोइ भेद बिरला लहै,
गहै सो कहै या सैन भाई ॥

---

(१) मक्खन।

(३३)

सहर बेगमपुरा गम्म को ना लहै, होय बेगम्म सो गम्म पावै ।
गुनों की गम्म ना अजब बिसराम है, सैन को लखै सोई सैन गावै ॥
मुक्ख बानी तिको[1] स्वाद कैसे कहै, स्वाद पावै सोई सुक्ख मानै ।
कहै कबीर या सैन गूँगा तईं, होय गूँगा सोई सैन जानै ॥

(३४)

अधर ही ख्याल औ अधर ही चाल है, अधर के बीच तहँ मट्ठ कीया ।
खेल उलटा चला जाइ चौथे मिला, सिंघ के मुक्ख फिर सीस दीया ॥
सबद घनघोर टंकोर तहँ अधर है, नूर को परसि के पीर[2] पाया ।
कहै कबीर यह खेल अवधूत का, खेलि अवधूत घर सहजि आया ॥

(३५)

छका[3] अवधूत मस्तान माता रहै । ज्ञान बैराग सुधि लिया पूरा ॥
स्वास उस्वास का प्रेम प्याला पिया । गगन गरजे तहाँ बजे तूरा ॥
पीठ संसार से नाम-राता रहै । जतन जरना लिया सदा खेलै ॥
कहै कबीर गुरु पीर से सुरखरू,[4] । परम सुख धाम तहँ प्रान मेलै ॥

(३६)

छका सो थका फिर देह धारै नहीं,
करम औ कपट सब दूर कीया ।
जिन स्वास उस्वास का प्रेम प्याला पिया,
नाम दरियाव तहँ पैसि[5] जीया ॥
चढ़ी मतवाल औ हुआ मन साबिता,[6]
फटिक ज्यों फेर नहिं फूटि जावै ।
कहै कबीर जिन बास निर्भय किया,
बहुरि संसार में नाहिं आवै ॥

(३७)

तरक संसार से फरक फारिग सदा, गरक[7] गुरु ज्ञान में जुगत जोगी ।
अर्ध औ उर्ध के बीच आसन किया, बंक प्याला पिवै रस्स भोगी ॥

---

(१) तिसका । (२) गुरु । (३) मतवाला । (४) आदर के योग्य । (५) घुस कर ।
(६) थिर । (७) डुबा हुआ ।

अर्ध दरियाव तहँ जाय डोरी लगी, महल्ल बारीक का भेद पाया ।
कहै कबीर यों संत निर्भय हुआ, परम सुख धाम तहँ प्रान लाया ॥

(३८)

माड़ि मतवाल जहँ ब्रह्म भाठी जरै, पिवै कोइ सूरमा सीस मेलै ।
पाँच को पेलि सैतान को पकरि के, प्रेम प्याला जहाँ अधर झेलै ॥
पलटिमन पवन को उलटि सूधा कँवल, अर्धऔ उर्ध बिच ध्यान लावै ।
कहै कबीर मस्तान माता रहै, बिना कर ताँतिया नाद गावै ॥

(३९)

आठ हूँ पहर मतवाल लागी रहै,
आठ हूँ पहर की छाक[1] पीवै ।
आठ हूँ पहर मस्तान माता रहै,
ब्रह्म की छौल[1] में साध जीवै ॥
साच ही कहतु औ साच ही गहतु है,
काच को त्याग करि साच लागा ।
कहै कबीर यों साध निर्भय हुआ,
जनम औ मरन का भर्म भागा ॥

(४०)

करत कल्लोल दरियाव के बीच में,
ब्रह्म की छौल[1] में हंस झूलै ।
अर्ध औ उर्ध की पैंग बाढ़ी तहाँ,
पलटि मन पवन को कँवल फूलै ॥
गगन गरजै तहाँ सदा पावस[2] झरै,
होत झनकार नित बजत तूरा ।
बेद कत्तेब की गम्म नाहीं तहाँ,
कहै कबीर कोइ रमै सूरा ॥

(१) आनन्द । (२) वर्षा ।

(४१)

गगन की गुफा तहँ गैब का चाँदना, उदय औ अस्त का नाँव नाहीं ।
दिवस औ रैन तहँ नेक नहिं पाइये, प्रेम परकास के सिंध माहीं ॥
सदा आनंद दुख दुन्द ब्यापै नहीं, पूरनानन्द भरपूर देखा ।
भर्म और भ्रांति तहँ नेक आवै नहीं, कहै कबीर रस एक पेखा ॥

(४२)

खेल ब्रह्मंड का पिंड में देखिया, जग्त की भर्मना दूर भागी ।
बाहरा भीतरा एक आकासवत, सुषमना डोरि तहँ उलटि लागी ॥
पवन को उलटि के सुन्न में घर किया, धर[1] में अधर भरपूर देखा ।
कहै कबीर गुरु पूर की मेहर से, तिरकुटी मद्ध दीदार पेखा ॥

(४३)

देखि दीदार मस्तान मैं होइ रह्यो, सकल भरपूर है नूर तेरा ।
सुभग दरियाव तहँ हंस मोती चुगैं, काल का जाल तहँ नाहिं नेड़ा ॥
ज्ञान का थाल औ सहज मति बाति है, अधर आसन किया अगम डेरा ।
कहै कबीर तहँ भर्म भासै नहीं, जन्म औ मरन का मिटा फेरा ॥

(४४)

सूर परकास तहँ रैन कहँ पाइये,
रैन परकास नहिं सूर भासै ।
ज्ञान परकास अज्ञान कहँ पाइये,
होइ अज्ञान तहँ ज्ञान नासै ॥
काम बलवान तहँ नाम कहँ पाइये,
नाम जहँ होय तहँ काम नाहीं ।
कहै कबीर यह सच्च बीचार है,
समुझ बिचार करि देखु माहीं ॥

(४५)

एक समसेर[2] इकसार बजती रहै,
खेल कोइ सूरमा संत झेलै ।

---

(१) शरीर । (२) तलवार ।

काम दल जीत करि क्रोध पैमाल[1] करि,
परम सुख धाम तहँ सुरत मेलै ॥
सील से नेह करि ज्ञान को खड़ग लै,
आय चौगान में खेल खेलै ।
कहै कबीर सोइ संत जन सूरमा,
सीस को सौंप करि करम ठेलै ॥

(४६)

पकरि समसेर[2] संग्राम में पैसिये, देह परजंत कर जुद्ध भाई ।
काटि सिर बैरियाँ दाब जहँ का तहाँ, आय दरबार में सीस नाई ॥
करत मतवाल जहँ संत जन सूरमा, घुरत निस्सान तहँ गगन धाई ।
कहै कबीर अब नाम से सुरखरू, मौज दरबार की भक्ति पाई ॥

(४७)

देह बंदूक और पवन दारू[3] किया,
ज्ञान गोली तहाँ खूब डाटी ।
सुरत की जामकी[4] मूठ चौथे लगी,
भर्म की भीत[5] सब दूर फाटी ॥
कहै कबीर कोइ खेलिहै सूरमा,
कायराँ खेल यह होत नाहीं ।
आस की फाँस को काटि निर्भय भया,
नाम रस रस्स कर गरक माहीं ॥

(४८)

ज्ञान समसेर की बाँधि जोगी चढ़ै,
मार मन मीर रन धीर हूवा ।
खेत को जात करि बिषन सब पेलिया,
मिला हरि माहिं अब नाहिं जूवा ॥

(१) रौंदना । (२) तलवार । (३) बारूत । (४) रस्सी या दूसरी जलने वाली चीज जिससे रंजक में आग पहुँचाते हैं । (५) दीवार ।

जगत में जस्स औ दाद दरगाह में,
खेल यह खेलिहै सूर कोई।
कहै कबीर यह सूर का खेल है,
कायराँ खेल यह नाहिं होई॥

(४९)

सूर संग्राम को देखि भागे नहीं,
देखि भागै सोई सूर नाहीं।
काम औ क्रोध मद लोभ से जूझना,
मँडा घमसान तहँ खेत माहीं॥
सील औ साच संतोष साही भये,
नाम समसेर तहँ खूब बाजै।
कहै कबीर कोइ जूझिहै सूरमा,
कायराँ भीड़ तहँ तुरत भाजै॥

(५०)

साध का खेल तो बिकट बेंड़ा मती,
सती औ सूर की चाल आगे।
सूर घमसान है पलक दो चार का,
सती घमसान पल एक लागे।
साध संग्राम है रैन दिन जूझना,
देह पर्जंत का काम भाई।
कहै कबीर टुक बाग ढीलो करै,
उलटि मन गगन से जमीं आई॥

(५१)

भगति सब कोइ करै भर्मना ना टरै,
भर्म जंजाल दुख दुन्द भारी।
काल के जाल में जगत सब फंदिया,
आस की डोर जम जोर डारी॥

ज्ञान सूझै नहीं सबद बूझै नहीं,
सरन ओटा नहीं गर्ब धारी।
ब्रह्म चीन्है नहीं भर्म पूजत फिरै,
हिये के नैन क्यों फोरि डारी॥
थापि निर्जीव को काटि सर्जीव धर,
जीव का हतन अपराध भारी।
जीव का दर्द बेदर्द कसकै नहीं,
जीभ के स्वाद नित जीव मारी।
एक पग ठाढ़ कर जोरि बिनती करै,
रच्छ बलि जाँउ सरना तिहारी।
वहाँ कोइ नहीं है अर्ज अंधा करै,
कठिन दंडौत नहिं टरत टारी॥
जीव अपराध सिर पर चढ़ाइ के,
रतन सों जनम सो हारि डारी।
कहै कबीर तूँ साँच की नजर करु,
बोलता ब्रह्म घट महँ उँजारी॥

(५२)

जागते देव को सेव रे मुग्ध नर,
नहीं तो बिकल चित होइ सोई।
पुरुष की सेव तें परम पद पाइये,
नारि सेवा नहीं मुक्ति होई॥
पुरुष परमात्मा देव निर्बान है,
नारि यह करत परपंच सारा।
कर्म अकर्म को त्यागु रे बावरे,
कहै कबीर तब होइ पारा॥

(५३)

सबद को खोजि ले सबद को बूझि ले,
सबद ही सबद तूँ चलो भाई।

सबद आकास है सबद पाताल है,
सबद तें पिंड ब्रह्मंड छाई ॥
सबद बयन बसै सबद सरवन बसै,
सबद के ख्याल मूरति बनाई ।
सबद ही बेद है सबद ही नाद है,
सबद ही सास्त्र बहु भाँति गाई ॥
सबद ही जंत्र है सबद ही मंत्र है,
सबद ही गुरू सिष को सुनाई ।
सबद ही तत्व है सबद निःतत्व है,
सबद आकार निराकार भाई ॥
सबद ही पुरुष है सबद ही नारि है,
सबद ही तीन देवा थपाई ।
सबद ही दृष्ट अदृष्ट ओंकार है,
सबद ही सकल ब्रह्मंड जाई ।
कहै कबीर तैं सबद को परखि ले,
सबद ही आप करतार भाई ॥

(५४)

है कोई दिल दरवेस तेरा ॥
नासूत मलकूत जबरूत को छोड़ि के,
जाइ लाहूत पर करै डेरा ॥
अकिल की फहम तें इलम रोसन करै,
चढ़ै खरसान[1] तब होय उजेरा ।
हिर्स हैवान को मारि मरदन करै,
नफस सैतान जब होय जेरा ॥
गौस औ कुतुब दिल फिकर जा का करै,
फतह कर किला तहँ दौर फेरा ॥

---

(१) सान ।

तखत पर बैठिके अदल इन्साफ करु,
दोजख औ भिस्त का करु निबेरा ।
अजाब सवाब का सबब पहुँचे नहीं,
जहाँ है यार महबूब मेरा ॥
कहै कबीर यह छोड़ि आगे चला,
हुआ असवार तब दिया दरेरा ॥

(५५)

स्वारथ की बात को सभन मिलि समुझिया,
साच की बात मन में न आवै ।
बेद औ सास्त्र सब स्वारथ ही कथत है,
और जी कहो वह कहाँ पावै ॥
अस्थि[1] औ माँस तें दूध की आदि है,
स्वाद के हेतु घृत पवित्र बतावै ।
तिल औ तेल उतपत्ति है घास की,
मद्धम कहैं कोइ नाहि खावै ॥
तुचा तें ऊन औ किर्म तें पाट है,
पाट अंबर सोई मनै भावै ।
काठ का फूल फल सुघर बस्तर बना,
मद्धम कहै मन में न आवै ॥
गाय औ हरिन दोउ चाम के महल में,
गऊछाला कोई ना बिछावै ।
जीवते दूध आचार पूजा करै,
मरे पंडित बड़ दोष लावै ॥
साच औ झूठ का ज्ञान करि देखिये,
लीन अलीन है द्वैत बाजी ।

---

(१) हाड़ ।

एक को निंदिया एक को बंदिया,
कहै कबीर नहिं साहिब राजी ॥

(५६)

रैन दिन फिरत खरसान[1] गुरुदेव की,
आरसी[2] दाग नहिं लगन पावै।
ज्ञान का कूड़ा औ सबद का मसकला,
काटि के मोरचा दरस पावै ॥
झूठ के ऊपरे साच चालै नहीं,
होय जो धात तो सान खावै।
कहै कबीर यह जीव है काँच का,
टूकड़ा टूकड़ा होइ जावै ॥

(५७)

मुरसिद की मेहर से मोम दिल पाक है,
बंदगी नूर पहिचान भाई।
हक्क हलाल ईमान साबूत कर,
मान परतीत छुटि जाय काई ॥
छोड़ दे कहर को जहर से[3] देह का,
साच से सफा[4] का गुसल[5] होई।
कहै कबीर कलमा काया हुआ,
जुक्ति के संग साहिब सोई ॥

(५८)

ज्ञान का गुसल कर पाक का ओजू[6] कर,
पंज तकबीर[7] परतीत पाई ॥
जत सत रोजा रह पचीस को जेर कर,
तीन को मेट दरवेस भाई ॥
तीन को मेट रहमान को भेंट तूँ,
तोहि हर रोज आपै लखाई ॥

(१) सान। (२) दर्पन, आइना। (३) शय—चीज। (४) शफ़ा—निरोगता। (५) नहान। (६) वज़ू, पंच स्नान। (७) पाँचो वक्त की नमाज़।

भिस्त फारिग हुआ पीर परचै लहा,
बिरला मुरीद दरगह बताई।
कहै कबीर सरबंग अविगत लखा,
सिफत क्या करौं दुसर नाहिं पाई॥

(५९)

वाह वाह उस मुरसिद के कदम को,
एक ही ख्याल में निहाल कर दिया है।
मारत है तान तान सुरत की कमान जान,
वाही जाने जिसे वार पार किया है॥
पीर मेरा साचा मैं मुरीद ता का,
जिन्ह मेहर करि मस्तक पर दस्त पंजा दिया है।
आप कहूँ असा[1] कहूँ तसबीह कहूँ कितेब,
कबीर किरपा तें जिन मुआ है न जिया है॥

(६०)

चेतु रे चेतु नर कहाँ भटकत फिरै,
आप सँभारि चित चेतु प्यारे।
दूसरा कौन है कहाँ ढूढ़त फिरै,
देखु सँभारि सोवै कहा रे॥
कहाँ तेरि आदि है कहाँ बुनियाद है,
कहाँ तें आया कहाँ जायगा रे।
आगे औ पीछे की खबर करु बावरे,
कौन है तूँ कौन करनहारे॥
सृष्टि जा की रची सकल घट पूर है,
आप अपनायो सबही बिसारे।
तीर्थ औ बर्त आचार पूजा घनी,
जोग औ जुक्ति सब पचे हारे॥

(१) सोंटा।

नाम सुमिरत रहै न्यारा सबही कहै,
मोहिं हरि मिलैं धीरज धारे ॥
जिन्हें हरि ना मिले आस झूठी तजी,
जियत मिलि रहे सोइ जन नियारे ।
कहै कबीर कोइ जियतही मिलि रहै,
आपहूँ तरे औरन तारे ॥

(६१)

चेत रे चेत नर जतन कर जीव का,
रतन सा जनम क्या जानि खोवै ।
छोड़ परपंच पाखंड सब जीव का,
डारु बहु बोझ क्यों बोझ ढोवै ॥
भर्म की भक्ति में नष्ट जिव जायगा,
साच सो रूप लख काज होवै ।
का भयो बहुत बिस्तार मूरत पुजे,
सिला जड़ सेइ नितनेम[1] धोवै ॥
बहुत लौलीन होइ संख धुन करत है,
घंट घनघोर अंदोर[2] होवै ।
धूप औ गंध लै पुहुप पूजा करै,
स्वाद के सँग सदा नींद सोवै ॥
हिये का सुन्न जड़ देव पूजत मरै,
सच्चिदानन्द नहिं ब्रह्म जोवै ।
बोलता ब्रह्म सिरताज है सभन का,
प्रगट परतच्छ क्या जानि खोवै ॥
ऐसा संसार पाखंड का खेल है,
असल को मेटि कै नकल जोवै ॥
कहै कबीर बीचार बिन दूनियाँ,
काल के सँग सदा नींद सोवै ॥

(१) सदा । (२) कोलाहल, शोर ।

(६२)

भजन करु भजन करु भजन करु राम का,
भजन है सोई जो राम रीझै।
प्रेम है सोई जो ओर ले निर्बहै[1],
राम को चीन्ह जो काम सीझै॥
डिंभ बहुतै करै फायदा कुछ नहीं,
बढ़त है ब्याज दिन मूल छीजे।
मान सबही करै चीन्ह नाहीं पड़े,
प्रेम बिनु स्वाद कहु काहि पीजै॥
दुलह घर में नहीं दुलहिन भाँवरि फिरै,
अजब अचरज्ज का खेल बूझै।
मुए मिलने की आस सबही करी,
गल की सैल नहिं नैन सूझै॥
भये कहुँ और तें चले कहुँ और पै,
कहा मानै नहीं कहा कीजै।
मन के रंग संसार टीड़ी[2] भई,
भेड़ ओ टिड़ी को काज कीजै॥
पड़े अँध कूप में पार पावैं नहीं,
छुटि न जंजाल जम जुआ दीजै।
कहै कबीर सँभार कछु कहा सुनु,
दूसरा है नहीं दृष्टि कीजै॥

(६३)

सील संतोष तें सबद जा मुख बसै,
संत जन जौहरी साच मानौ।
बदन बिकसित रहै ख्याल आनन्द में,
अधर में मधुर मुसकात बानी॥

---

(१) अंत तक निभ जाय। (२) टिड्डी।

साच डोलै नहीं झूठ बोलै नहीं,
　　सुरत में सुमति सोइ श्रेष्ठ ज्ञानी।
कहत हौं ज्ञान पूकारि कै सभन से,
　　देत उपदेस दिल दर्द जानो॥
ज्ञान को पूर है रहनि को सूर है,
　　दया की भक्ति दिल माहिं ठानो।
ओर तें छोर ले एक रस रहत हैं,
　　ऐसे जन जक्त में बिरले प्रानी॥
ठग बटमार संसार में भरि रहे,
　　हंस की चाल कहँ काग जानी।
चपल औ चतुर हैं बने बहु चीकने,
　　बात में दुरुस्त पै कपट ठानी॥
कहा तिन्ह से कहौं दया जिन्ह के नहीं,
　　घात बहुते करैं बकुल ध्यानी।
दुर्मती जीव की दुबिधि छूटै नहीं,
　　जन्म जन्मान्तर पड़े नर्क खानी॥
काग कूबुद्धि सूबुद्धि पावै कहाँ,
　　कठिन कठोर बिकराल बानी।
अगिन के पुंज हैं सितलता तन नहीं,
　　बिष औ अमृत दोउ एक सानो॥
कहा साखी कहे सुमति जागी नहीं,
　　साच को चाल बिन धूर धानी।
सत सुकिरत की चाल साची सही,
　　काग बक अधम की कौन खानी॥
कहै कबीर कोइ सुघर जन जौहरी,
　　सदा सवधान छीर नीर छानी।

आप को आप लख आपु तहकीक कर,
आदि औ अंत रस एक जानी ॥

(६४)

दुरुस्त जिभ्या रहै बचन अमृत कहै,
काम औ क्रोध का खोज[1] खोई ।
ज्ञान का पूर है रहनि का सूर है,
संत जन जौहरी सबद जोई ॥
ज्ञान की दृष्टि में झूठ धोखा तजा,
साच बिन काज काहु न होई ।
बोलता ब्रह्म से दूसरा कौन है,
आतमा राम तहकीक सोई ॥
देख दिवि दृष्टि करि दूसरा है नहीं,
भर्म के फंद मति परै कोई ।
दूसरा खोजते केते जुग टरि गये,
सिद्ध समाधि नहिं पार पाई ॥
सिद्ध साधक मुनी जन सब पचि मुए,
ब्रह्म-ऋषि बेद पढ़ि निगम गाई ।
कोई आकार कहि कोई निराकार कहि,
तत्व को छोड़ि निःतत्त धाई ॥
समुझि नाहीं परै उक्ति[2] सब कोइ करै,
आप को आप नहिं लखै भाई ।
राज औ पाट तजि चले बनखँड गये,
सिद्ध समाधि धुनि गगन छाई ॥
अहरनिसि[3] आस लागी रहै सुन्न में,
बिना जल पिये क्या प्यास जाई ।

(१) निशान । (२) बुद्धिमानी, अनुमान । (३) दिन रात ।

आस लागी रहै प्यास बूझै नहीं,
सुन्न गृह से फलहि कौन पाई ॥
भर्मना छोड़ि दे ज्ञान को मानि ले,
आप को चीन्ह तूँ कौन भाई ।
देख दिल ढूँढ़ि कै सृष्टि का की रची,
जल से जुगति कहु को बनाई ॥
कहै कबीर तूँ ताहि तहकीक करु,
लाल की खान कहु कौन ठाँई ।
कौन के तुम अहो कहाँ तुम जाहुगे,
बिना देखे परतीत लाई ॥

(६५)

अजब आचरज संसार का खेल है,
झूठ को थामि के प्रेम लागै ।
साच के कहे छुइ जात है तुरत ही,
उठै भिन्नाइ[१] ज्यों फनिक[२] जागै ॥
पाथर को सुर[३] कहै ईसुर नाहीं लखै,
जड़ को सेवै चेतन्य त्यागै ।
बोलता ब्रह्म चेतन्य ईसुर सही,
सेव मन कर्म सब भर्म भागै ॥
आत्म परमातमा देखु सब एक को,
दया धरु हृदय में सुमति जागै ।
काम औ क्रोध खनि[४] गाड़ु चित चेति कै,
तब तोहिं तरत नहिं बार लागै ॥
चतुर चतुरंग है सुघर पंडित बने,
लिये जड़ देव बहु खंभ बागै[५] ।

(१) क्रोध में भर कर । (२) साँप । (३) देवता । (४) खोद कर । (५) बगीचे ।

जगन्नाथ रामनाथ परसि गोदावरी,
द्वारका छाप लै देह दागै ॥
नित नेम आचार औ संख धुनि करतु है,
सुमिरन ध्यान नहिं कबहुँ स्वाँगै[1] ।
संसय की मोट अपार सिर पर चढ़ी,
जन्म जन्मान्तर कहँ मोच्छ माँगै ॥
मोच्छ औ मुक्ति को दाँव ऊहाँ नहीं,
आस को डोरि में सुरति टाँगै ।
आस अपनपो चीन्हि पावै नहीं,
सुघट को छाड़ि औघट्ट राँगै[2] ॥
मन को चरित्र काहू जानि नहि परै,
दूसरा भाव मन रंग लागै ।
मनहिं की थाप में तीर्थ औ मूर्ति हैं,
जाति औ पाँति मन नाहि त्यागै ॥
रैन औ दिवस मन ध्यान सुमिरन करै,
मन सावज[3] होइ झाँकि भागै ।
कहै कबीर सुख साहिबी सो करै,
साच औ झूठ को भेद पावै ।
चीन्ह अपनपो आपही होइ रहै,
भर्म तें मुक्त होइ बिमल गावै ॥

(६६)

फहम[4] करु फहम करु फहम करु मान यह,
फहम बिनु फिकिर नहिं मिटै तेरी ।
सकल उँजियार दीदार दिल बीच है,
जौक औ सौक सब मौज तेरी ।

(१) स्वाँग की तरह अर्थात् झूठ-मूठ को भी नहीं करता । (२) रँगै । (३) शिकार, वहशी । (४) समझ, बिचार ।

बोलता अलमस्त मस्तान महबूब है,
इन से अदल कहु कौन केरी ।
एकही नूर दरियाव भरि देखिये,
फैल वह रहा सब सृष्टि में री ॥
आपही गनी[1] गरीब है आपही,
आप गनीम[2] होइ आप घेरी ।
आपही चोर पुनि साहु है आपही,
आपही कथै ज्ञान आप सुने री ॥
आपही हरी हिरनाकुस आपही,
आप नरसिंह होइ आप गेरी[3] ।
आपही रावना आप रघुनाथ जी,
आप को आपही आप दलै री ॥
आप बलिराम होइ दान बसुधा[4] किया,
आप बावन होइ आप छलै री ।
आपही कृस्न है कंस है आपही,
आप को आप आपहि हतै री ॥
आप ही भक्त भगवंत है आपही,
और नहिं दूसरा अर्ज सुनै री ।
आप त दूसरा धिगड़[5] ठाढ़ा किया,
आप ही मूर्ति है आप पुजेरी ॥
कहै कबीर कोइ जगे जन जौहरी,
जिन सत का सरूप हेरि लिये री ॥

(६७)

जीभ का फूहरा पंथ का चूहरा[6],
तेज तमा[7] धरे आप खोवै ।

(१) धनी । (२) शत्रु । (३) गिराया । (४) पृथ्वी । (५) धिगड़ा = नीच ।
(६) भंगी । (७) भारी लालच ।

काम औ क्रोध दुइ पाप का मूल है,
कुबुधि का बीज क्या जानि बोवै ॥
सील संतोष लै सबद उच्चारहू,
साध के दरस क्यों जान गोवै[1] ।
साध के दरस में परस पारस मिलै,
ज्ञान की दृष्टि में सरस होवै ॥
साध लच्छन गुनवन्त गंभीर है,
बचन लौलीन भाषा सुनावै ।
पातरी[2] फूहरी अधम का काम है,
राँड़ का रोवना भाँड़ गावै ॥
कहै कबीर तू पैठ दरियाव में,
लाल अमोल तब नजर आवै ॥

(६८)

रूप बिनु रेख अलख सबही कथै,
पिंड पग सीस नहिं प्रान काया ।
पृथी जल पवन पावक तहाँ कछु नहीं,
रज सत तम नहीं त्रिगुन माया ॥
बीज नहिं बृच्छ नहिं पुरुष नारी नहीं,
जीवन मरन नहिं अस्त लखाया ।
दिवस औ रैन नहिं तारागन चंद नहिं,
गगन आकास नहिं धूप छाया ॥
जल नहीं थल नहीं जीव औ सृष्टि नहिं,
काल जिवमार नहिं संसय सताया ।
पार के पार परब्रह्म पूरुष बसै,
कथैं पंडित जना निगम गाया ॥

(१) जान छिपावै । (२) वेश्या ।

कहै कबीर यह दुन्द चहुँ दिसि मचा,
जुगन की भूल नहि भेद पाया ॥

(६९)

कहाँ लों कहौं चहुँ जुग की भूल है,
गुरू सब सृष्टि ब्रह्मा भुलाना ।
बाट चीन्है नहीं उक्ति मन में धरै,
बुद्धि परगास मन माहिं ठाना ॥
नाम करतार का कहा कहि लीजिया,
बिबि[1] अच्छर गहि बाँधि लीन्हा ।
ररा औ ममा दुइ अच्छर इन्ह सों कही,
यही बिबि अच्छर का ध्यान कीन्हा ।
कही बिरंचि बिस्नु निजु कै सुनी,
सुना सिव स्रवन दै साच माना ।
यहि पुरुष पुरान औ पारब्रह्म निरगुन हैं,
साधन सों भिन्न हैं राम जाना ।
यही सुनि सिव औ बिस्नु हूँ चित गहे,
रहे सुख पाय धन धाम चीन्हा ।
कहै कबीर यह ज्ञान तिर्देव का,
फैलाय आप सब सृष्टि दीन्हा ॥

(७०)

मेहर बिनु मेहरबाँ किस तरह पाइये ॥
मेहर की कफनी कुलह भी मेहर की,
मेहर का मुतंगा[2] कमर में लगाइये ।
मेहर का आसा तमासा भी मेहर का,
मेहर का आब दिल को पिलाइये ॥
अंदर भी मेहर है बाहर भी मेहर है,
मेहर के महल में मेहरबाँ मनाइये ।

(१) दो । (२) मूँज की करधनी जो साधू लोग बाँधते हैं ।

कहर की लहर में कोटि जन बहि गये,
(कबीर)मेहर बिनु मेहरबाँ किस तरह पाइये ॥

(७१)

देख वे देख अलेख के खेल को,
बना सरबज्ञ नाना अपारा।
आपही भोग बिलास रस कामिनी,
आपही नन्द का कान्ह कुमारा ॥
आपही भक्त प्रहलाद हिरनाकुस,
अपना उदर लै आप फारा।
कहै कबीर यह मन का खेल है,
चित्र के बान तें कौन मारा ॥

(७२)

क़हर की जहर दिल बीच तें दूर कर,
खोज दिल बीच जहँ बसत हक्का[1]।
खूब महबूब है खूब वह यार है,
करन कारन जहाँ सबद पक्का ॥
खड़े ददवंद दरवेस दरगाह में,
खैर औ मेहर मौजूद मक्का।
जिकिर कर जिकिर कर फिकिर को दूर कर,
कहै कबीर यह सखुन[2] पक्का ॥

(७३)

कहै कबीर तू साध गुरु सेइ ले,
दया के तख्त पर बैठु भाई।
ज्ञान के महल में सकल सुख साहिबी,
साध संगति मिले भेद पाई ॥
भेद पाये बिना भर्म भागे नहीं,
भर्म जंजाल धरि काल खाई।

(१) हक़ यानी खुदा। (२) बचन।

साच औ झूठ को परखि तहकीक करि,
संत जन जौहरी भला भाई ॥
प्रगट परतच्छ है साच सोइ जानिये,
दृष्टि ना परै सो झूठ झाँई ।
बड़ी मरजाद पाखंड की जगत में,
साच के कहत ही कलह होई ॥
चीन्हि साहिब परै काज तबही सरै,
परम आनंद बड़ भाग सोई ।
सिफत बहुतै सुनी अजब दुलहा बना,
बिरहनी बिरह गुन बहुत गाई ॥
दरस बिन परस बिन आस पूजै नहीं,
नीर बिन प्यास कबहूँ न जाई ।
नीर नियरे हुता प्यास भइ दूर की,
मर्म जानै नहीं जुगत कोई ॥
काँच के महल में भूँसि कुत्ता मरा,
आपनी छाँह को आप धाई ।
देखु दिबि दृष्टि यह सृष्टि जहँड़े[1] गई,
मड़ि रहा धोख सब घट्ट माहीं ॥
मरकट मूँठि गहि आप छोड़ै नहीं,
फँसि रहा मूढ़ जम फाँस माहीं ।
देखि के केहरी[2] आपनी परतिमा[3],
पड़ा है कूप में प्रान खोई ॥
कहै कबीर यह भर्म है दूसरा,
मर्म जानैं नहीं अंध लोई ।
करतूत बहुतै कहैं रहनि में ना रहैं,
कहै ज्यों रहै त्यों संत सोई ॥

(१) ठगा गई । (२) शेर । (३) छाया ।

(७४)

सुखो सब जीव गुरुदेव की सरन हैं,
काल का बान तहँ नाहि लागै।
आठहू पहर जहँ राम रस पीवना,
करम औ भरम सब दूरि भागै॥
ज्ञान बीचार औ ध्यान निर्भय रहैं,
रैन दिन ध्यान गुरु और नाहीं।
कहै कबीर सुख सिंध का झूलना,
मन और पवन को पलटै माहीं॥

(७५)

जीव अज्ञान सब अंध चेते नहीं, बहै बिष धार में खाय गोता।
खोट करनी करै राम उर ना धरै, पाप का बीज सो फिरै बोता॥
यार असनाय[1] से प्रीति अति करत है, राम के जनन की करत हाँसी।
कहत कबीर नर ऊबरै कौन बिधि, मारि के काल गल डार फाँसी॥

(७६)

ज्ञान का धनुष ले मुक्ति मैदान में,
सील का बान ले मतँग[2] मारा।
सबद का घाव सो साच उर में धसा,
काम दल लोभ हंकार मारा॥
क्रोध अरु मोह दहि चोर पाँचो गये,
जोति परकास देखि उँजियारा।
सुन्न के महल में रमे कबीर गुरु,
सबद अनहद्द से काल टारा॥

(७७)

मोह के माहिं सब जीव मस्तान है,
खान औ पान सब मगन हूवा।
नारि सो पुरुष औ पुरुष सो नारि है,
अरस औ परस मिलि नाधि जूवा॥

(१) आश्ना।(२) हाथी अर्थात् मन।

नारि के रैन दिन ध्यान है पुरुष का,
पुरुष को ध्यान है नारि केरा।
कहै कबीर सब जीव यों ऊरझा,
कहो क्यों छोड़िहै गर्भ फेरा॥

(७८)

देह तो देख मिलि जायगी खेह में,
देह से काज कुछ कीजिये रे।
राम का भजन औ गुरू की बंदगी,
देह धरि लाभ यह लीजिये रे॥
चालती कौड़ियाँ काज भल कीजिये,
कौड़ियाँ साथ कुछ नाहि जाईं।
प्रान के छूटते पलक नहिं यार की,
कहै कबीर सुन चेत लाई॥

(७९)

सोवता होय जो सोई तो जागिहै,
जागता सोवता कहाँ जागै।
मान मन माहिं अभिमान ज्ञानी हुआ,
सबद अवधूत का कहाँ लागै॥
कहत औ सुनत सब अवधि पूरी भई,
अन-पायिना[1] भक्ति नहिं हाथ आई।
कहै कबीर यह ज्ञान सब थोथरा,
जीव का भला क्यों होय भाई॥

(८०)

साध जो होय तो ब्याध को नास कर,
ब्याध के नास तें साध होई।
बासना ब्याध सब जीव को दहत है,
बिना गुरुदेव कहु कौन खोई॥

(१) दुर्लभ।

कतरनी कपट दिल बीच से दूर कर,
साच की सुमरनी हाथ लीजे।
कहै कबीर जब होय निर्बासना,
निर्मला नाम रस राम पीजे॥

(८१)

गुरु की नारि तो हरि लई चन्द्रमा[1],
कुन्ती ने क्वारे ही करन कीन्हा[2]।
सुग्रीव की नारि तो छीनि लइ बालि ने[3],
मोहनी देखि सिव भये दीना[4]॥
अहिल्या बाम्हनी तें इन्द्र ने छल किया[5],
द्रोपदी पंच भरतार कीन्हा[6]।
पारा ऋषि मछोदरी तें काम क्रीड़ा करी[7],
कृस्न गोपिन के रंग भीना॥
ब्रह्मा पुत्री तें भोग बरबस किया[8],
पाप औ पुन्न दोइ घोरि पीना।
कहै कबीर सब देव अन्याई भये,
इनहीं का कहा सब सृष्टि कीन्हा॥

(१) बृहस्पतिजी देवताओं के गुरू थे जिन की स्त्री से चन्द्रमा ने भोग किया और उस संगम से बुद्ध उत्पन्न हुए। (२) कुंती की क्वारी अवस्था में सूर्य्य ने उसके साथ भोग किया जिससे राजा करन पैदा हुए। फिर पीछे कुंती का ब्याह राजा पाँडु से हुआ। (३) सुग्रीव की स्त्री को उसके बड़े भाई बालि ने छीन लिया था इसकी कथा रामायन में है। (४) शिवजी का अहंकार इंद्रजीत होने का तोड़ते को विष्नु ने मोहनी रूप धारन किया था जिसके पीछे शिव बिहवल होकर दौड़े। (५) अहिल्या गौतम ऋषि की स्त्री का नाम था जिसके साथ छल से इंद्र ने भोग किया। इस पर उसके पति ने सराप दिया और वह पत्थर की शिला बन गई। फिर श्रीरामचन्द्र ने उसका उद्धार किया (६) द्रोपदी के पाँच पति पाँचो पांडव थे। (७) देखो नोट नं० ४ पृष्ठ ५२। (८) ब्रह्मा के विषय में कथाओं में लिखा है कि उन्होंने अपनी कन्या से भोग किया।

झूलने

(१)

खाक जान तो खाक में रलि जावै,
तब आपु गुलाब[१] समाइये जी।
वह नूर नबी तहकीक करै,
तब आदि मुराद को पाइये जी॥
असमान की दृष्टि को गर्द करै,
तब सुन्न समाधि लगाइये जी।
सुन्न छोड़ि बेसुन्न तें रहित होवै,
तब धाम कबीर का पाइये जी॥

(२)

पाक जाति साहिब आलम की जी,
इसै जानि के दूसरा कौन जोवै[२]।
कसरत करै दुख मेटने को,
सुख दम के साथ करार होवै॥
सुख दुख को मेटि के एक करै,
यहि जानि के आपु को आपु मोवै[३]।
बुजुर्ग कबीर के संग दया,
हर दम में एका एक होवै॥

(३)

सब घट में आप वह खेलता है, तूँ दूसरा और क्या पेखता है॥
पिरथी पवन के बीच पानी, दरमियान में तेज[४] कलोलता है।
सत रज मिलाय आकास ही को, दम धरि के बानी बोलता है॥

---

(१) अंतरी कँवल। (२) खोजै। (३) किसी चीज़ में चिकनी चीज़ मिला कर मुलायम करने को मोवना बोलते हैं। (४) अग्नि।

याहि बोल का तहकीक करो, क्या हलुका भारी तोलता है।
दम दम सेती जगत खेती, दया संग कबीर जो खोलता है॥

(४)

वार पार की हद्द हदूद देखी, बिच आवना जावना लेखा है।
नदी नाव का यह संजोग बना, तहाँ मिलना जुलना देखा है॥
देख भालि के यों आनन्द करो, हम तुम में एक परे क्या है।
कोई वार रहै कोइ पार रहै, दया संग कबीर बिबेका[1] है॥

(५)

कोइ ज्ञान करै भावै[2] ध्यान धरै, गुन रूप उचारि के गावता है।
कोइ जोग करै भावै मौन धरै, अनहद्द अलेख बतावता है॥
सुरझी उरझी की भूल पड़ी, घट घट का भेद नहिं पावता है।
रहै जीव जगत के संग दया, कायम कबीर बतावता है॥

(६)

तखत बना हाड़ चाम का जी, दाना पानी का भोग लगावता है।
मल मूत्र भरै लोहू माँस बढ़ै, आप अपना अंस बढ़ावता है॥
नाद बिंद के बीच कलोल करै, सो आतमराम कहावता है।
अस्थान यही कहाँ ढूँढ़ता है, दया देस कबीर बतावता है॥

(७)

(एक) नर नारी छोड़ि उदास फिरैं,
सो तो संगहिं मनसा नारि भोगो।
अलख की प्यास बिन बिरहित तन,
भो छीन सद पिंडरोग रोगो॥
सुरझी उरझी की भूल पड़ी,
दुख जेर भये संसार सोगो।

(१) परखा। (२) चाहे।

कबीर कहै कोइ नाहिं बूझै,
यह मन के रंग सब भये जोगी ॥

(८)

काठ के बीच में अगिनि जैसे, जैसे तिल में तेल निवास है जी ।
दूध के बीच में घीव जैसे, ऐसे फूल के बीच में बास है जी ॥
कबीर कहै घट को जो मथै, तब पावै सबद प्रकास है जी ।
मिहनत बिना सब ढूँढ़ फिरे, यह बात से लोग निरास है जी ॥

(९)

यह तो एक हुबाब[1] है जी, साकिन दरियाव के बीच सदा ।
हुबाब तो ऐन दरियाव है जी, देखो मौज[2] बहर[3] नजर जुदा ॥
उठने में तो हुबाब है जी, बैठने[4] में है मतलब खुदा ।
हुबाब दरियाव कबीर है जी, दूजा नाम बोलै सो बुदबुदा ॥

(१०)

जब लग खोज चला जावे, तब लग नहिं हाथ मुद्दा[5] आवे ।
जहाँ खोज थके तहाँ हीं घर करै, वहाँ घर को पकड़ के बैठि जावे ॥
थकित रहै जब दिल सेती, तब आगे चलना नहिं भावे ।
कबीर मुद्दा हासिल हूआ, बातन से नहिं कोइ महल पावे ॥

(११)

तन महजिद मन मुलना बसै,
चित्त के चौतरा बंग देवै ।
पाँच को जेर पचीस को जिबह कर,
तत्त की तसबी[6] हाथ लेवै ॥
मेहर को देख के कहर को खोइ के,
इस भाँति मेहर तें कहर खोवै ।

(१) पानी का बुल्ला । (२) लहर । (३) समुद्र । (४) मन को स्थिर करने में ।
(५) मतलब, तत्व बस्तु । (६) सुमिरनी ।

कहै कबीर कोइ संत जन जौहरी,
आप साहिब आसिक होवै ॥

(१२)

सूर को कौन सिखावता है, रन माहिं असी[1] का मारना जी ।
सती को कौन सिखावता है, सँग स्वामी के तन जारना जी ॥
हंस को कौन सिखावता है, नीर छीर का भिन्न बिचारना जी ।
कबीर को कौन सिखावता है, तत्त रंगों को धारना जी ॥

(१३)

दरियाव की लहर दरियाव है जी,
दरियाव और लहर में भिन्न कोयम[2] ।
उठे तो नीर है बैठे तो नीर है,
कहो दूसरा किस तरह होयम[3] ॥
उसी नाम को फेर के लहर धरा,
लहर के कहे क्या नीर खोयम[4] ।
जक्त हो फेर सब जक्त और ब्रह्म में,
ज्ञान करि देख कब्बीर गोयम[5] ॥

(१४)

अनप्रापत बस्तु को कहा तजे, प्रापत तजे सो त्यागी है ।
असील तुरंग को कहा फेरे, अफतर[6] फेरे सो तो बागी[7] है ॥
जग भव का गावना क्या गावे, अनुभव गावै सो रागी है ।
बन गेह की बासना नास करै, कबीर सोई बैरागी है ॥

(१५)

खुदी छोड़ि खुदा को याद करो, पढ़ि पाक साहिब का झूलना जी ।
केते झूलि गये केते झूलते हैं, सो तो रैन का देखना पेखना जी ॥

---

(१) तलवार । (२) क्या । (३) हो सकता है । (४) गुप्त हो गया । (५) गुप्त ।
(६) अबतर, बदमाश । (७) शह-सवार ।

(२५)

ब्रह्मा को औलाद[1] कमल तें है । अगस्त कुंभ तें जानिये जी[2] ।
सिंगो की माय तो मृगिनी है[3] । किरती सुत ब्यास बखानिये जी[4] ॥
बसिष्ट की माय तो गनिका है[5] । गोकरन गऊ तें जानिये जी[6] ।
बालमीक की माय तो बामिया है[7] । संकर पिता कर मानिये जी ॥
हम तो बूझि बिचारि देखा । दासी नारद कर मानिये जी[8] ।
कबीर एते आचारजों में । बाम्हन कवन बखानिये जो ॥

---

(१) उत्पत्ति । (२) मैत्रेय और बरुण दोनों साथ बैठे थे कि उधर से उरबसी अप्सरा को जाते देख कर दोनों ऐसे कामातुर हो गये कि मैत्रेय ने तो तुर्त उससे भोग किया जिस से बशिष्ठ मुनि जनमे और बरुण ने जो अपने को न रोक सके अपना बीर्य्य एक घड़े में गिरा दिया जिससे अगस्त मुनि उत्पन्न हुए । (३) द्रोनाचार्य्य नदी में नहा रहे थे कि उनका बीर्य्य पात हो गया । उसी समय उस जल को आकर एक हिरनी ने पी लिया जिससे वह गाभिन हो गई और उसके पेट से शृङ्गी ऋषि पैदा हुए । (४) ब्यास जी मछोदरी के पेट से, जिसका नाम सत्यवती और कोई कीर्त्ती बताते हैं, पाराशर ऋषि के बीर्य्य से पैदा हुए थे । (५) देखो पृष्ठ ४७ नोट न० २ । (६) किसी राजा के एक पंडित थे जिनको पुत्र होने की बड़ी अभिलाषा थी । एक बार किसी साधू ने उन्हें एक फल दिया कि इसको अपनी स्त्री को खिला दो तो उसके पुत्र होगा । पंडितजी ने उस फल को अपनी स्त्री को दिया पर स्त्री ने जो औलाद होने से डरती थी उस फल को छिपाकर घर की गऊ को खिला दिया जिसके प्रभाव से उस गऊ के पेट से गोकरनजी पैदा हुए । इनके कान गऊ की तरह होने से इनका नाम गोकरन पड़ा । (७) बालमीक जी बहेलिया थे । तपोभूमि में उनके शरीर के चारों ओर दीमकों ने ढूहे और साँपों ने बाँबी बना ली थी जिसके बाहर निकलने पर वह बाँबिया कहे जाते थे । (८) नारद मुनि का जन्म दासी के पेट से हुआ था ।

॥ समाप्त ॥